ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218
PP. NO.- 304-307

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-III, Issues-18, YEAR- Dec. -2020

पूर्व माध्यमिक स्तर पर सामाजिक विज्ञान की पाठय पुस्तकों का मानकों के परिप्रेक्ष्य में मूल्यांकन

1. देवेन्द्र कुमार
2. रामबली यादव
Email : devnim62@gmail.com

Received- 28.06.2020, Revised- 01.07.2020, Accepted - 04.07.2020

सारांश– सामाजिक विज्ञान शिक्षण में शिक्षक की भूमिका सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। विविध आयाम वाले इस विषय की विषयवस्तु का क्षेत्र अन्य विषयों की तुलना में अधिक विस्तृत है। शिक्षक को ही इस बात का निर्णय करना पड़ता है कि कौन से सामाजिक विज्ञान की कौन सी विषय वस्तु शिक्षार्थी के लिए उपयोगी है तथा किस विषय की कौन सी विषयवस्तु शिक्षार्थी को किस सीमा तक किस पद्वति से पढ़ाने की आवश्यकता है। इस विषय के अध्यापक का पूरे पाठ्यक्रम पर अपना पूर्ण अधिकार नहीं होता। अतः कई अंश पढ़कर पढ़ाने की आवश्यकता बनी रहती है। विद्यार्थी को अपने कर्त्तव्य एवं अधिकार तथा सामाजिक एवं आर्थिक व्यवस्थापन की शिक्षा इसी विषय के अध्ययन से मिलती है।

कुंजीभूत शब्द– विविध आयाम, विषयवस्तु, निर्णयए व्यवस्थापन।

1. शोध अध्येता– पीएचडी शिक्षाशस्त्र,
2. शोध निर्देशक– प्रोफेसर, शिक्षाशरूत्र,
महर्षि यूनिवर्सिटी ऑफ इनकार्मेशन टेक्नोलाजी, लखनउ (उ0प्र0), भारत

अनुरूपी लेखक

आदर्श शिक्षक ही अपने शिक्षार्थियों में आदर्श चरित्र, कर्त्तव्य परायणता, राष्ट्रप्रेम एवं आर्थिक और सामाजिक व्यवस्थापन जैसे गुणों का विकास करने में सफल हो सकता है। इसी समय शिक्षार्थियों में सामाजिक चेतना, सह्रदयता, सहानुभूति, सहिष्णुता और समाज जैसे गुणों का उदय होता है, इसलिए शिक्षार्थियों को प्रत्येक कदम पर मार्ग दर्शन देने एवं आदर्श प्रस्तुत कर सकने की आवश्यकता बनी रहती है। इस प्रकार शिक्षक को पर्याप्त सतर्क रहने की आवश्यकता बनी रहती है। सामाजिक विज्ञान के अध्यापक के लिए पाठ्य पुस्तकों का भी महत्व है। पाठ्य पुस्तकें संस्कृति एवं परम्पराओं में बदलाव लाने में महत्वपूर्ण साधन का कार्य करती हैं। यद्यपि यह पुस्तकें माध्यमिक शिक्षा परिषद तथा राष्ट्रीयकृत पाठ्य–पुस्तक मण्डल एवं कुछ लेखक व्यक्तिगत रूप से भी लिखते हैं, प्रकाशित कराई जाती हैं। शिक्षक एवं अधिकारी वर्ग को विद्यालय के लिए पुस्तकों का चयन करते समय सतर्कता बरतनी चाहिए। मानव सभ्यता के प्रारम्भ में ज्ञान मौखिक रूप से दिया जाता था। लिखने की कला का विकास लगभग छः हजार वर्ष पूर्व ही हुआ। इससे पहले ज्ञान को कंठस्थ करने की ही व्यवस्था थी। वैदिक काल में भी वेदों के श्लोकों को गुरू द्वारा शिष्यों को कंठस्थ कराया जाता था।

प्राचीन तथा मध्यकाल में पुस्तकें भोज–पत्रों और ताम्र–पत्रों पर तैयार की जाती थीं। ये पुस्तकें हस्तलिखित होती थीं और इनकी संख्या इतनी कम होती थी कि वे प्रत्येक विद्यार्थी को उपलब्ध नहीं थीं। इसी से इस काल में मौखिक शिक्षा की व्यवस्था थी। जब कागज का आविष्कार हुआ, तब पुस्तकों का मनचाही प्रतियों में छपना सम्भव हो सका। पाठ्यक्रम को ध्यान में रखकर पाठ्य–पुस्तकों के विकास का इतिहास सोलहवीं शताब्दी से प्रारम्भ होता है। सर्वप्रथम, कमेनियस (1592–1600 ई॰) ने भाषा शिक्षण की पाठ्य पुस्तक लिखी थी। इसके बाद पाठ्य पुस्तकों के महत्व को देखते हुए इसका प्रचलन बढ़ता गया तथा अनेक शिक्षाविदों एवं विषय–विशेषज्ञों द्वारा पाठ्य–पुस्तकें लिखी जाने लगीं।

19वीं शताब्दी में फ्रोबेल, डीवी तथा महात्मा गांधी ने पुस्तकीय ज्ञान का विरोध किया तथा अनुभव–केन्द्रित एवं क्रिया–प्रधान शिक्षा पर बल दिया। परिणामस्वरूप पाठ्य–पुस्तकों के महत्व को कम समझा जाने लगा, किन्तु तथ्यों, सिद्धान्तों आदि के बोधगम्यता की दृष्टि से इनकी पूर्ण उपेक्षा नहीं की जा सकी।

कुछ शिक्षा शास्त्रियों ने पुस्तक विहीन शिक्षण के भी प्रयोग किये किन्तु वे भी इसी निष्कर्ष पर पहुँचे कि पाठ्य–पुस्तकों का अंत नहीं हो सकता। अतः अब यह सिद्ध हो चुका है कि पाठ्य–पुस्तकों के अभाव में शिक्षण प्रक्रिया सम्भव नहीं है।

भारत में पाठ्य–पुस्तकों के निर्माण का इतिहास अधिक पुराना नहीं है। ईस्ट इण्डिया कम्पनी के शासनकाल में सबसे पहला मुद्रणालय सन् 1824 ई0 में कलकत्ता में स्थापित हुआ जिसका नाम था 'कलकत्ता शिक्षा–प्रेस'। इसी से भारत में पुस्तकों की छपाई का काम प्रारम्भ हुआ। सन् 1854 ई0 में वुड के घोषणा–पत्र में पाठ्य–पुस्तकों के प्रकाशन की संस्तुति हुई तो अंग्रेजी, संस्कृत और फारसी में कुछ पुस्तकें प्रकाशित हुई। किन्तु किसी भी आयोग ने तब पाठ्य–पुस्तकों के गठन पर बल नहीं दिया क्योंकि सन् 1882 के भारतीय शिक्षा आयोग, सन् 1918 के कलकत्ता विश्वविद्यालय आयोग, सन् 1929 की हर्टाग समिति तथा सन् 1936–37 ई0 की वुड

PIF-7.500 *ASVS Reg. No. AZM 561/2013-14*

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-III, Issues-18, YEAR- Dec. -2020

एवट रिपोर्ट में पाठ्य पुस्तकों की रचना और सुधार के सम्बन्ध में कोई सुझाव नहीं मिलता। सन् 1910 ई0 के बाद भारतीय नेताओं ने शिक्षा की ओर ध्यान तो दिया परन्तु वे भी पाठ्य–पुस्तकों की समस्या तक अन्य बाधाओं के कारण नहीं पहुँच सके।

सन् 1935 ई0 में 'गवर्नमेन्ट ऑफ इण्डिया एक्ट' के अनुसार जब कुछ प्रान्तों में स्वायत्त शासन का प्रारम्भ हुआ तो कुछ राष्ट्रीय नेताओं ने पाठ्य–पुस्तकों की रचना और सुधार पर भी ध्यान दिया। सन् 1937–38 ई0 की प्रथम आचार्य नरेन्द्रदेव समिति ने पाठ्य–पुस्तकों के सम्बन्ध में कुछ सुझाव दिये। सन् 1952–53 में मुदालियर आयोग की स्थापना हुई। उसने प्रचलित पाठ्य पुस्तकों की आलोचना करते हुये उनमें सुधार लाने पर बल दिया। पाठ्य–पुस्तकों से सम्बन्धित एक समिति के गठन पर भी बल दिया।

सन् 1954 ई0 में फोर्ड फाउण्डेशन के अन्तर्गत एक अन्तर्राष्ट्रीय दल ने प्रचलित भारतीय पाठ्य–पुस्तकों का निरीक्षण किया। उसने सुझाव दिया कि भारतीय सरकार प्रकाशन और लेखन सम्बन्धी कुछ नियम बनाये और उन्हीं के अधीन प्रकाशक एवं लेखक पुस्तकें तैयार करें। परन्तु सरकार इनके प्रकाशन का उत्तरदायित्व अपने हाथ में न ले।

सन् 1964–66 ई0 में कोठारी आयोग ने पाठ्य–पुस्तकों पर अधिक ध्यान दिया। उसने कहा कि उच्च कोटि के विद्वान पाठ्य–पुस्तकों की रचना में रूचि लेते तथा सम्बन्धित अधिकारी पाठ्य–पुस्तकों की स्वीकृति एवं चुनाव में बेईमानी करते हैं। अतः इस क्षेत्र में अनुसंधान की बहुत आवश्यकता है तथा पाठ्य–पुस्तकों का प्रकाशन सरकारी शिक्षा विभाग द्वारा किया जाना चाहिये।

शैक्षिक तकनीकी के विकास से पाठ्य पुस्तकों के लिखने के ढंग में भी परिवर्तन हुए हैं। हमारे देश में राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् (एन.सी.ई.आर.टी.), नई दिल्ली द्वारा भी इस क्षेत्र में कार्य किया जा रहा है। इस प्रकार परम्परागत पाठ्य–पुस्तकों के साथ–साथ इनके कई तरह के नवीन रूप भी प्रस्तुत किये गये हैं उत्तर प्रदेश में बेसिक शिक्षा परिषद् द्वारा पाठ्य–पुस्तकों का निर्माण कार्य किया जाता है।

इसी तथ्य को ध्यान में रखकर शोधार्थी ने 'पूर्व माध्यमिक स्तर पर सामाजिक विज्ञान की पाठ्य–पुस्तकों का मानकों के परिप्रेक्ष्य में मूल्यांकन' पर अध्ययन करना उचित समझा। जिसके लिए निम्न उद्देश्य निर्धारित किये –

(1) उत्तर प्रदेश में पूर्व माध्यमिक स्तर पर बेसिक शिक्षा परिषद द्वारा निर्धारित सामाजिक विज्ञान की पाठ्य–पुस्तकों का मानकों के परिप्रेक्ष्य में मूल्यांकन करना,
(2) एन0सी0ई0आर0टी0 द्वारा प्रकाशित पूर्व माध्यमिक स्तर पर सामाजिक विज्ञान की पाठ्य–पुस्तकों का मानकों के परिप्रेक्ष्य में मूल्यांकन करना,
(3) मानकों के परिप्रेक्ष्य में उक्त दोनों पाठ्य–पुस्तकों की तुलना करना,
(4) पाठ्य–पुस्तकों के मानकों के सन्दर्भ में शिक्षकों की प्रतिक्रियाओं का अध्ययन,
(5) एन0सी0ई0आर0टी0 व बेसिक शिक्षा परिषद् की सामाजिक विज्ञान की पाठ्य–पुस्तकों का मूल्यों के सन्दर्भ में अध्ययन करना।

सामाजिक विज्ञान पाठ्य–पुस्तकों की उपयोगिता सामाजिक विज्ञान में भी पाठ्य–पुस्तकों की अत्यधिक उपयोगिता एवं महत्ता है। बालक–बालिकाओं को सामाजिक विज्ञान का यथोचित ज्ञान देने के लिए पाठ्य–पुस्तकें एक उत्तम, उपयोगी और आवश्यक उपकरण हैं। इनसे इतिहास, भूगोल, नागरिक शास्त्र एवं अर्थशास्त्र आदि के शिक्षण की व्यवस्था सुलभ हो जाती हैं। सामाजिक विज्ञान में पाठ्य–पुस्तकों का प्रमुख कार्य मात्र सूचनायें देना नहीं होता, बल्कि सूचनाओं के माध्यम से विद्यार्थियों को सीखने की ओर प्रवृत्त करते हुए उन्हें देश सम्बन्धी योग्यताओं की प्राप्ति में सहायता करना होता है। देश के क्षेत्र सम्बन्धी ज्ञान एवं योग्यता की अभिवृद्धि ही पाठ्य–पुस्तक का प्रधान कार्य है।

सामाजिक विज्ञान की पाठ्य–पुस्तकों के माध्यम से विद्यार्थियों के कौशल और स्वाध्यायशील प्रवृत्ति को इस उद्देश्य से प्रशिक्षित करने की चेष्टा की जाती है कि पुस्तकों के पठन और मनन के द्वारा वे अपने भावी जीवन में ज्ञानोपलब्धि की ओर अग्रसर होते रहें। ज्ञान के विकास और पठन–पाठन तथा अध्ययन –अध्यापन में एकरूपता एवं समान स्तर के लिए भी पाठ्य पुस्तकों का सहारा लेना पड़ता है। ज्ञान को मितव्ययी एवं व्यवस्थित ढंग प्रदान करने के लिए भी पाठ्य–पुस्तकें आवश्यक हैं। शिक्षक के लिए पाठ्य–पुस्तकें एक मार्ग का कार्य करती हैं क्योंकि इनके द्वारा कक्षा की पूरे वर्ष प्रगति के लिए वे योजना तैयार करते हैं। पाठ्य–पुस्तकों से उन अध्यापकों को पाठ्य–वस्तु व्यवस्थित करने में अधिक सहायता मिलती है जिनको शिक्षण का अधिक अनुभव नहीं है, उन्हें विषय–वस्तु एक ही जगह पाठ्य–पुस्तक में मिल जाती है। ऐसी अवस्था में हम कह सकते हैं कि सामाजिक विज्ञान शिक्षा की पूरी क्रिया ही आज पाठ्य–पुस्तकों पर आधारित है। सामाजिक विज्ञान शिक्षण में पुस्तकें ज्ञान के विकास में तो सहायक होती ही हैं, इसके साथ–साथ इनके द्वारा बालकों का मनोरंजन कार्य भी होता है। अध्ययन–अध्यापन प्रक्रिया में पाठ्य–पुस्तक का महत्वपूर्ण स्थान है। शिक्षा का ऐसा कोई स्तर नहीं है, जहाँ पाठ्य–पुस्तक का उपयोग नहीं किया जाता। अध्यापक द्वारा दिया गया ज्ञान कितना भी महत्वपूर्ण क्यों ना हो, उसकी पूर्णता के लिए पाठ्य–पुस्तक का सहारा लिया जाता है। शिक्षा का विकास एवं

PIF-7.500 ASVS Reg. No. AZM 561/2013-14

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-III, Issues-18, YEAR- Dec. -2020

प्रचार कुछ हद तक पाठ्य–पुस्तकों की सहायता से करने का प्रयास किया जा रहा है। अन्य विषयों की भांति सामाजिक विज्ञान में भी पाठ्य–पुस्तकों के महत्व को नकारा नहीं जा सकता। आवश्यकता इस बात की है कि इनमें पाठ्य–वस्तु, भाषा–शैली, आदि की दृष्टि से पर्याप्त सुधार करके इन्हें छात्रों के लिए अधिकाधिक उपयोगी बनाया जाये।

1.2 सम्बन्धी साहित्य का सर्वेक्षण– अन्वेषण कार्य में प्रस्तुत शोध विषय के गहन विज्ञान के बाद अन्वेषण से सम्बन्धित साहित्य की समालोचना एक महत्वपूर्ण दृष्टिकोण है जो कि प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से शोध–कार्य पर प्रभाव डालती है। प्रत्येक शोध–अध्ययन नये विचारों, नये ज्ञान, नयी योजनाओं में सहयोग देता है। अतः यह बहुत ही आवश्यक हो जाता है कि सम्बन्धित क्षेत्र के ज्ञान, विचार तथा शोध का गहराई से अध्ययन करें जो कि इसे आगे बढ़ाता है। समालोचना केवल सिद्धान्तरूप से ही महत्वपूर्ण नहीं है, वरन् यह सम्बन्धित विषय क्षेत्र के अन्तःदृष्टिज्ञान को उजागर करता है तथा सम्बन्धित शोध के लिए सैद्धान्तिक आधार तथा अध्ययन से सम्बन्धित कार्य–विधि के लिये उपयुक्त साधन चुनने में सहायक होता है। समालोचना की महत्ता के बारे में बैस्टा ने लिखा है :–'विषय से सम्बन्धित साहित्य का गहन अध्ययन करने से शोधकर्ता को पता चल जाता है कि सम्बन्धित क्षेत्र में क्या–क्या कार्य हो चुका है और उनके क्या निष्कर्ष निकले तथा सम्बन्धित क्षेत्र में किस पद्धति का प्रयोग किया जाये तथा सम्बन्धित क्षेत्र में कौन–कौन सी अनसुलझी समस्याऐं रह गयी हैं।' (बेस्ट0 जॉन0 डब्लू, रिसर्च इन एजूकेशन, थर्ड एडीशन, प्रेन्टिस हॉल ऑफ इंडिया प्राईवेट लिमिटेड, न्यू देहली, 1978)।

वाघामेर (1971) ने महाराष्ट्र में कक्षा चार के लिए निर्धारित इतिहास की पाठ्य–पुस्तकों के अभ्यास कार्य का परीक्षण किया। मैनुऐल (1982) ने एन0सी0ई0आर0टी0 पर्यावरणीय अध्ययन में पाठ्य–पुस्तकों का विश्लेषण किया और विभिन्न पक्षों में उन्हें दोषपूर्ण पाया। गोपालकृष्णन (1977), जोशी (1972), करणदिकार (1973) और करीम (1982) ने विभिन्न दृष्टिकोणों से पाठ्य–पुस्तकों की विषयवस्तु का विश्लेषण किया।

जोशी (1999) ने विद्यालयी विज्ञान पाठ्य–पुस्तकों के विश्लेषण के लिए समुचित वर्ग योजना को विकसित करने का प्रयास किया। महाराष्ट्र राज्य के पाठ्य–पुस्तक निर्माण तथा पाठ्यक्रम अनुसंधान विभाग ने एक से दस स्तर तक की विद्यालयी पाठ्य–पुस्तकों में स्त्री की भूमिका का अध्ययन किया और प्रत्यक्ष रूप से लिंग पक्षपात पाया।

वाई0एन0वॉलवॉकर (2001) ने रत्नागिरि में कक्षा दो, तीन एवं चार की गणित की पाठ्य–पुस्तकों का आलोचनात्मक मूल्यांकन किया। इस अध्ययन के मुख्य उद्देश्य इस प्रकार थे :–

1. कक्षा दो, तीन एवं चार के लिए गणित की प्रस्तावित पाठ्य–पुस्तकों में त्रुटियों का पता लगाना, यदि कोई हो तो।
2. विद्यार्थियों के बोध स्तर के लिए इन पाठ्य–पुस्तकों की उपयुक्तता का परीक्षण करना।

के0 एन. ललिथम्मा ने 1973 में केरल के माध्यमिक विद्यालयों में आधुनिक गणित की पाठ्य–पुस्तकों के मूल्यांकन के लिए अध्ययन किया और यह पाया कि पुस्तक में निर्माण से ज्यादा प्रक्रिया के कार्य पर अधिक बल दिया गया था। सभी पाठ्य–पुस्तकों में कुछ विशेष क्षेत्रों में छोटी–मोटी भूल पायीं गयीं। पाठ्य–पुस्तकों में जीवन शैली के द्वारा विचारों के प्रदर्शन के तत्व पूर्णतः सही नहीं थे। गुणवत्ता बढ़ाने वाली सामग्री सभी स्तरों पर देने की आवश्यकता महसूस की गयी। आठवीं कक्षा की पाठ्य–पुस्तकों में ज्यमितिय के लिए दी गयी ऐतिहासिक सूचनाऐं पर्याप्त नहीं थीं। किसी भी पाठ्य–पुस्तक में सन्दर्भ सामग्री नहीं दी गयी थी। सभी पाठ्य–पुस्तकों में मुख्य पहचानी गयीं वास्तविक संख्या और प्रत्ययों के समूल को प्रयोग में लाकर उचित रूप से सम्बन्धित करते हुए विभिन्न प्रकरण जोड़े गये थे। प्रकरण और समस्याओं का स्तर और क्रम निर्धारण भली–भाँति किया गया था। विषयों का स्वरूप निर्धारित करने वाले मूल सिद्धान्तों पर जोर डाला गया था। समुचित अभ्यास कार्य दिया गया था और समस्याओं को विभिन्न रूपों में लिया गया था। किसी भी समस्या पर कार्य करने के लिए संदर्भित उत्तर नहीं दिये गये थे। बाह्यरूप से पाठ्य–पुस्तक बिल्कुल सही थीं फिर भी यह देखा गया कि पाठ्य–वस्तु सारणी को अधिक विस्तृत कर दिया गया था। पाठ्य–पुस्तक में कक्षा दस के लिए भी सूत्र दिये जाने चाहिये थे।

आई0एस0 शर्मा ने 2008 में प्राथमिक स्तर पर पाठ्य–पुस्तकों में प्रयुक्त भाषा की बोधगम्यता पर मनो–सामाजिक तत्वों के प्रभाव का अध्ययन किया। इस अध्ययन में प्राथमिक स्तर पर हिन्दी, विज्ञान और सामाजिक–विषय की पाठ्य–पुस्तकों में प्रयुक्त भाषा की बोधगम्यता पर सामाजिक और मनोवैज्ञानिक तत्वों के प्रभाव का अध्ययन किया।

जी0एस0 यादव ने 1989 में कक्षा छः, कक्षा सात, कक्षा आठ की मराठी मातृभाषा की पाठ्य–पुस्तकों के द्वारा मानवीय और नैतिक मूल्यों के विकास का अध्ययन किया।

1990 में शशिकला जमखण्डी ने कक्षा पांच के लिए पुनः निर्धारित मराठी (मातृभाषा) की पाठ्यपुस्तकों को तैयार करने पर अध्ययन किया। इस अध्ययन में पाठ्यक्रम की तैयारी के लिए निर्धारित मानदण्ड और पाठ्य–पुस्तकों के बीच असमानता की समस्या को ध्यान में रखा गया।

1991 में महाराष्ट्र राज्य के पाठ्य–पुस्तकों के महकमे के द्वारा निर्मित

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-III, Issues-18, YEAR- Dec. -2020

पाठ्य–पुस्तकों में प्रयुक्त प्रकारों का आलोचनात्मक अध्ययन किया गया। इस अध्ययन में पाठ्य–पुस्तक महकमा, पूना द्वारा प्रयुक्त प्रकारों और पाठ्य–पुस्तक के प्रत्येक प्रकार की उपयुक्तता को मापने का प्रयास किया गया।

एन0टी0 एकबोट (2016) ने महाराष्ट्र राज्य की माध्यमिक शिक्षा बोर्ड के द्वारा कक्षा एक से दस तक के लिए प्रस्तावित मराठी मातृभाषा की पुस्तकों के भाषीय विश्लेषण का अध्ययन किया और पाया कि एक भी पाठ्य–पुस्तक बिना त्रुटि के नहीं थीं। पाठ्य–पुस्तकों की तैयारी के समय सभी तत्वों को ध्यान में रखते हुए सही क्रम का अनुकरण नहीं किया गया था। पाठ्य–पुस्तकों के निर्माण के समय भाषा विज्ञान के विकास की प्रक्रिया के सिद्धान्त को ध्यान में नहीं रखा गया था। पाठ्य–पुस्तकें पारम्परिक विधियों के द्वारा तैयार की गयीं थीं। पाठ्य–पुस्तकों को तैयार करते समय विद्यार्थियों के समझने की शक्ति, आयु और मानसिक विकास को ध्यान में नहीं रखा गया और विषय–विशेषज्ञों द्वारा लिखित पाठों को नहीं लिया गया। इसी क्रम में ये पाठ्य–पुस्तकें विद्यार्थियों में भाषा विज्ञान के विकास को लाने के लिए अनुपयुक्त और अपूर्ण थीं।

नरेश प्रसाद भोक्त ने 2013 में भारतीय शिक्षा व्यवस्था में पाठ्य–पुस्तकीय संस्कृति के विकास का अध्ययन किया। उन्होंने पाया कि सरकार ने शिक्षा विभाग द्वारा अनुशंसित पाठ्य–पुस्तकों का प्रयोग विद्यालयों में अनिवार्य कर दिया। इनमें से अधिकांश पाठ्य–पुस्तकें अंग्रेजी भाषा की पुस्तकें का अनुवाद मात्र थीं। इनका ग्रामीण बच्चों के सामाजिक–सांस्कृतिक परिवेश एवं अनुभवों से सम्बन्ध नहीं था। अतः ये बच्चों की रूचि एवं जिज्ञासा जगाने में असफल रहीं। साथ ही पाठ्य–पुस्तकों की रचना हेतु उन्हीं भारतीयों को योग्य माना गया जिनका अंग्रेजी भाषा एवं संस्कृत दोनों पर अधिकार हो। ये सुविधा प्राप्त भारतीय प्रायः उच्च जाति वर्ग से ही आते थे। इनके द्वारा रचित पाठ्य–पुस्तकें प्रायः इसी उच्च वर्ग के सांस्कृतिक जगत को प्रतिबिम्बित करती थीं। अतः कमजोर तबके के लोग इनसे अपने को जोड़ नहीं पाये। साथ ही अनिवार्य पाठ्य–पुस्तकें की यह व्यवस्था शिक्षा एवं प्रकाशन से जुड़े व्यक्तियों के लिए धन उपार्जित करने का महत्वपूर्ण साधन बन गयी। गरीब परिवार के बच्चों के पास इन पुस्तकों को खरीदने हेतु पर्याप्त पैसे नहीं थे। अतः विद्यालय छोड़ने के अतिरिक्त उनके पास कोई विकल्प नहीं था।

पाठ्य–पुस्तकों के निर्माण–निर्धारण एवं चयन हेतु केन्द्रित व्यवस्था की जगह विकेन्द्रित व्यवस्था का होना आवश्यक है। सरकारी एवं गैर सरकारी दोनों ही तरह के अभिकरणों को एक से अधिक तरह की पाठ्य–पुस्तकों के निर्माण की स्वतंत्रता होनी चाहिये। लेकिन अध्यापक एवं छात्रों के इस बात की स्वतन्त्रता होनी चाहिये कि वे उपलब्ध पाठ्य–पुस्तकों में से उपयुक्त पाठ्य–पुस्तक का चयन कर सकें। यह न केवल देशी शिक्षा पद्धति की परम्परा के अनुकूल होगा वरन् उसके द्वारा पिछली दो शताब्दियों में पाठ्य–पुस्तकों के क्षेत्र में आई विकृतियों को भी समाप्त करना सम्भव हो सकेगा।

सीमांकन– इस आधार पर कक्षा 6, 7 एवं 8 की पूर्व माध्यमिक स्तर की इतिहास, भूगोल एवं नागरिक शास्त्र की पुस्तकों को सम्मिलित किया गया है।

प्रयुक्त उपकरण– प्रस्तुत अध्ययन के अन्तर्गत एन0 सी0 ई0 आर0 टी0 द्वारा निर्धारित मानक के अन्तर्गत पुस्तकों का मूल्यांकन किया गया है।

प्रयुक्त विधि– प्रयुक्त उपकरण के अन्तर्गत 'रेटिंग स्केल' जोकि पंचपदीय को प्रयोग किया गया है।

निष्कर्ष– प्रस्तुत शोधाध्ययन में पाया गया कि कक्षा 6, 7 एवं 8 की सामाजिक विज्ञान की समस्त पुस्तकों का आकार उचित है। पुस्तकों का विस्तार शिक्षार्थियों के स्तरानुकूल पाई गई। कक्षा 6 की इतिहास की पुस्तक की सिलाई अधिक की गई जिससे कि पाठ की महत्वपूर्ण जानकारी छिप गई है। इतिहास एवं भूगोल की कक्षा 7 की पुस्तकों में इन्हें भी जानिए तथा कुछ महत्वपूर्ण जानकारी रंगीन छपाई में देकर रोचक बनाया गया है।

सभी कक्षाओं की पुस्तकों में पाठ सम्बन्धी रेखाचित्र, मानचित्र एवं शासकों की स्थापत्य कला के छाया चित्र भी दिए गए हैं। जिससे छात्र को सम्पूर्ण जानकारी उपलब्ध होती है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. बुच एम0 बी0 (एडी) : थर्ड सर्वे ऑफ रिसर्च इन एजूकेशन, न्यू दिल्ली, एन0सी0ई0आर0टी0 (1987)
2. बुच एम0 बी0 (एडी) : फोर्थ सर्वे ऑफ रिसर्च इन एजूकेशन, न्यू दिल्ली, एन0सी0ई0आर0टी0 (1991)
3. बुच एम0 बी0 (एडी) : फिथ सर्वे ऑफ रिसर्च इन एजूकेशन, न्यू दिल्ली, एन0सी0ई0आर0टी0 (1995)
4. सामाजिक अध्ययन शिक्षण : डॉ0 भंवर लाल, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
5. सामाजिक अध्ययन शिक्षण : सोती–शिवेन्द्र चन्द्र, आई0 पी0 एच0, मेरठ।

*****